



2026:AHC:38535-DB

ए.एफ.आर.

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

आपराधिक अपील संख्या-1279 वर्ष 1987

जग्गू कोल एवं अन्य

.....अपीलकर्तागण

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

.....प्रतिवादी

अपीलकर्तागण के अधिवक्ता : श्री आशीष कुमार, श्री राजेश कुमार विश्वकर्मा, श्री एस.पी. सिंह

प्रतिवादी के अधिवक्ता : (ए.जी.ए.)

न्यायालय संख्या – 48

माननीय न्यायमूर्ति चन्द्र धारी सिंह

माननीय न्यायमूर्ति देवेन्द्र सिंह-।

द्वारा : माननीय न्यायमूर्ति चन्द्र धारी सिंह

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



1. वर्तमान आपराधिक अपील अभियुक्त-अपीलार्थीगण जग्गू कोल एवं शंकर द्वारा अपर सत्र न्यायाधीश, मिर्जापुर द्वारा सेशन परीक्षण संख्या 251 वर्ष 1986, जो मुकदमा अपराध संख्या 151 वर्ष 1986, धारा 302 भारतीय दण्ड संहिता, थाना-लालगंज, जनपद-मिर्जापुर से उत्पन्न हुआ था, में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 31.03.1987 के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध कर निम्नवत् दण्डित किया गया था :-

अभियुक्त-अपीलार्थी जग्गू कोल

(क) धारा 302 सहपठित धारा 34 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत आजीवन कारावास।

(ख) धारा 394 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत पाँच वर्ष का कठोर कारावास तथा ₹1,000/- के अर्धदण्ड से दण्डित किया गया। अर्धदण्ड अदा न करने की दशा में उसे एक वर्ष का अतिरिक्त कठोर कारावास भुगतना होगा।

(क) धारा 302 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत आजीवन कारावास।

(ख) धारा 394 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत पाँच वर्ष का कठोर कारावास तथा ₹1,000/- के अर्धदण्ड से दण्डित किया गया। अर्धदण्ड अदा न करने की दशा में उसे एक वर्ष का अतिरिक्त कठोर कारावास भुगतना होगा।

तथापि, दोनों अपीलार्थीगण को प्रदत्त समस्त सजाओं को साथ-साथ चलने का निर्देश दिया गया था।

संक्षिप्त तथ्य

2. संक्षेप में, अभियोजन पक्ष का मामला, जैसा कि प्रथम सूचना रिपोर्ट में वर्णित है, यह है कि कन्हैया लाल कोल पुत्र ललाई कोल, निवासी ग्राम गोदर कला, थाना-लालगंज, जनपद-मिर्जापुर द्वारा एक लिखित तहरीर

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



प्रस्तुत की गई, जिसमें अन्य बातों के साथ यह उल्लेख किया गया कि दिनांक 07.08.1986 को वह दुवार कलां से ददरी जाने वाले मार्ग से अपने घर वापस लौट रहा था। लगभग अपराह्न 04:30 बजे जब वह अपने गाँव की पूर्व दिशा में स्थित सड़क पर पहुँचा, तब उसने देखा कि तीन व्यक्ति, अर्थात् राधे कोल, जगू कोल तथा शंकर कोल, आपस में खड़े होकर बातचीत कर रहे थे। इसके पश्चात वह सड़क के पश्चिमी भाग में स्थित ढेसुर वृक्ष के उत्तर दिशा की ओर बढ़ा। तत्पश्चात उसने पगडण्डी का रास्ता पकड़ा और अपने गाँव की ओर चल पड़ा। जैसे ही वह तालाब के समीप पूर्व दिशा में पहुँचा, उसे गोली चलने की आवाज सुनाई दी। वह तत्काल वापस लौटा और उसने देखा कि जगू कोल तथा शंकर कोल ने सड़क के पूर्वी भाग में राधे कोल को गोली मार दी है। गोली चलने की आवाज सुनकर प्रेमलाल, छोटकऊ कुर्मी तथा लुधर कोल भी घटनास्थल पर पहुँच गए और उन्होंने देखा कि जगू कोल तथा शंकर कोल घायल अवस्था में पड़े राधे कोल को घसीट रहे थे। उन्हें आता देखकर अभियुक्तगण राधे कोल को झाड़ियों के समीप छोड़कर जंगल की ओर उत्तर दिशा में भाग गए। जब वे लोग राधे कोल के पास पहुँचे, तब उन्होंने देखा कि उसके बाएँ कंधे पर गोली का घाव था तथा अत्यधिक रक्तस्राव हो रहा था। वह कराह रहा था, उसे हिचकियाँ आ रही थीं और तत्पश्चात उसकी मृत्यु हो गई। उक्त लिखित तहरीर प्रदर्श-क-1 के रूप में अंकित की गई।

3. कन्हैया लाल कोल (जिसे आगे 'सूचनाकर्ता' कहा जाएगा) द्वारा प्रस्तुत उपर्युक्त लिखित तहरीर के आधार पर मुकदमा अपराध संख्या 151 वर्ष 1986, धारा 302 भारतीय दण्ड संहिता, थाना-लालगंज, जनपद-मिर्जापुर में प्रथम सूचना रिपोर्ट पंजीकृत की गई, जिसे प्रदर्श-क-9 के रूप में अंकित किया गया। उक्त सूचना की प्रविष्टि कांस्टेबल मुहर्रिर चन्द्रिका शर्मा द्वारा

सामान्य डायरी में रिपोर्ट संख्या-5 के माध्यम से की गई, जिसे प्रदर्श-क-10 के रूप में अंकित किया गया।

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



4. प्रथम सूचना रिपोर्ट पंजीकृत होने के उपरान्त विधिक प्रक्रिया प्रारम्भ हुई तथा प्रकरण की विवेचना थाना प्रभारी रामप्रताप आर्य (पी.डब्ल्यू.-6) को सौंपी गई। उन्होंने अपने मुख्य परीक्षण में कथन किया कि दिनांक 08.08.1986 को वह थाना-लालगंज में थाना प्रभारी के पद पर नियुक्त थे। उन्होंने सर्वप्रथम सूचनाकर्ता का कथन अंकित किया। तत्पश्चात प्रातः 07:30 बजे वह घटनास्थल पर पहुँचे और पाया कि राधे कोल (जिसे आगे 'मृतक' कहा जाएगा) का शव झाड़ियों के समीप पड़ा हुआ था। मृतक कुर्ता-पायजामा पहने हुए था। उसके वस्त्रों की तलाशी लेने पर उसके कुर्ते की दाहिनी जेब से ₹200/- की नकद धनराशि बरामद हुई। शव से लगभग 50 कदम उत्तर दिशा में एक बोरी पाई गई, जिसमें लगभग 10 किलोग्राम धान तथा लकड़ी रखी हुई थी। उक्त वस्तुओं को अपने कब्जे में लेकर प्रदर्श-क-5 के रूप में अंकित किया गया तथा मृतक के चाचा रंगीला लाल को सुपुर्द कर दिया गया। उन्होंने शव को अपने कब्जे में लेकर पंचायतनामा की कार्यवाही सम्पन्न की, जिसे प्रदर्श-क-6 के रूप में अंकित किया गया। उन्होंने फोटो नाश, चालान नाश, आर.आई. को प्रेषित पत्र, पोस्टमार्टम हेतु पत्र तथा मृतक के वस्त्र तैयार एवं संकलित किए, जिन्हें प्रदर्श-क-11 से प्रदर्श-क-15 तक अंकित किया गया। उन्होंने शव को सीलबन्द कर नमूना मुहर तैयार की, जिसे प्रदर्श-क-16 के रूप में अंकित किया गया। इसके उपरान्त मृतक के शव को सीलबन्द अवस्था में पोस्टमार्टम हेतु कांस्टेबल रामदेव एवं सन्त प्रसाद के सुपुर्द किया गया। उन्होंने घटनास्थल का निरीक्षण कर नक्शा नजरी तैयार किया, जिसे प्रदर्श-क-17 के रूप में अंकित किया गया। स्तरंजित मिट्टी तथा साधारण मिट्टी को कब्जे में लेकर जब्ती की कार्यवाही की गई, जिसे प्रदर्श-क-2 के रूप में अंकित किया गया। शव के उत्तर दिशा में एक खोखा पड़ा हुआ मिला, जिसे बरामद कर प्रदर्श-क-3 के रूप में अंकित किया गया। उन्होंने प्रेमलाल तथा रंगीलाल सहित अन्य साक्षियों के कथन भी अंकित किए। अभियुक्तों की तलाश की गई, किन्तु वे नहीं मिले। दिनांक 09.08.1986 को उन्हें सूचना प्राप्त हुई कि अभियुक्तगण नरदगहना गाँव जाने वाले तिराहे पर

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



उपस्थित हैं। इस सूचना पर वह अन्य पुलिसकर्मियों के साथ उक्त स्थान पर पहुँचे। पुलिस दल को देखकर अभियुक्त भागने का प्रयास करने लगे, किन्तु उन्हें पकड़ लिया गया। पूछताछ के दौरान अभियुक्त शंकर ने बताया कि अपराध में प्रयुक्त देशी तमंचा उसके पास है तथा वह उसकी बरामदगी करा सकता है। अभियुक्त जग्गू ने यह बताया कि वह मृतक की साइकिल बरामद करा सकता है।

इसके उपरान्त अभियुक्त शंकर पुलिस दल को अपने घर ले गया, जो गाँव के दक्षिणी भाग में स्थित था। उसने दक्षिण दिशा वाले कमरे का ताला खोला, पूर्वी दीवार के पास की मिट्टी हटाई तथा कागज में लिपटा हुआ एक देशी तमंचा एवं एक कारतूस निकालकर प्रस्तुत किया। उक्त तमंचे एवं कारतूस को सीलबन्द किया गया तथा बरामदगी ज्ञापन तैयार किया गया, जिसे प्रदर्श-क-7 के रूप में अंकित किया गया। तत्पश्चात अभियुक्त जग्गू पुलिस दल को अपने घर ले गया, जहाँ से मृतक की साइकिल बरामद की गई। विवेचक द्वारा बरामदगी स्थल का नक्शा नजरी भी तैयार किया गया, जिसे प्रदर्श-क-18 के रूप में अंकित किया गया।

5. विवेचना पूर्ण होने के उपरान्त विवेचक द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थीगण, अर्थात् जग्गू कोल एवं शंकर उर्फ शिवशंकर के विरुद्ध आरोप-पत्र प्रस्तुत किया गया, जिसे प्रदर्श-क-20 के रूप में अंकित किया गया।

6. चूँकि यह मामला विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय था, अतः विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा इसे सत्र न्यायालय को सुपुर्द कर दिया गया, जहाँ इसका पंजीकरण सेशन परीक्षण संख्या 251 वर्ष 1986 के रूप में किया गया। विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, मिर्जापुर ने आदेश दिनांक 09.12.1986 द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी जग्गू कोल के विरुद्ध धारा 302 सहपठित धारा 34 भारतीय दण्ड संहिता एवं धारा 394 भारतीय दण्ड संहिता तथा अभियुक्त-अपीलार्थी शंकर के विरुद्ध धारा 302 एवं 394 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत आरोप निर्धारित किए।

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



उक्त आरोपों को हिन्दी भाषा में पढ़कर सुनाया एवं समझाया गया, जिनसे दोनों अभियुक्तों ने इंकार किया तथा स्वयं को निर्दोष बताते हुए विचारण की माँग की।

7. अभियुक्त-अपीलार्थीगण के अपराध को पूर्णतः एवं संदेह से परे सिद्ध करने के उद्देश्य से अभियोजन पक्ष द्वारा कुल छह साक्षियों का परीक्षण कराया गया, जिनमें प्रेमलाल तिवारी (पी.डब्ल्यू.-1), कन्हैया (पी.डब्ल्यू.-2), रंगीलाल (पी.डब्ल्यू.-4) तथा रामलखन (पी.डब्ल्यू.-5) तथ्यात्मक साक्षी हैं, जबकि डॉ. चन्द्र प्रकाश (पी.डब्ल्यू.-3) एवं थाना प्रभारी रामप्रताप आर्य (पी.डब्ल्यू.-6) औपचारिक साक्षी हैं।

8. प्रेमलाल तिवारी (पी.डब्ल्यू.-1) ने अपने मुख्य परीक्षण में कथन किया कि दिनांक 07.08.1986 को लगभग अपराह्न 04:30 बजे शौचादि से निवृत्त होने के पश्चात उन्होंने गोली चलने की आवाज सुनी, जिसके तुरंत बाद कन्हैया कोल की चिल्लाने की आवाज सुनाई दी। वह आवाज की दिशा में बढ़े। छोटकऊ कुर्मी, जो अपने खेत में पक्षियों का शिकार कर रहा था, वह भी वहाँ पहुँच गया। लाउधर कोल भी अपनी साइकिल से वहाँ आ गया। घटनास्थल पर पहुँचने पर उन्होंने देखा कि अभियुक्त-अपीलार्थी जग्गू कोल एवं शंकर एक व्यक्ति को मारते-पीटते हुए झाड़ियों की ओर घसीट रहे थे। जग्गू उसके हाथ पकड़े हुए था जबकि शंकर उसके पैर पकड़े हुए था। जैसे ही उन्होंने शोर मचाया, अभियुक्तगण ने मृतक को झाड़ियों में छोड़ दिया और साइकिल से घटनास्थल से भाग गए। उन्होंने अभियुक्तों का पीछा नहीं किया क्योंकि उनके पास तमंचा था। तत्पश्चात वे घायल व्यक्ति के पास पहुँचे, जिसने कराहते हुए हिचकियाँ लीं और उसकी मृत्यु हो गई। उसके बाएँ कंधे से रक्तस्राव हो रहा था। लाउधर कोल ने मृतक को देखकर रोना प्रारम्भ कर दिया और कहा, “यह मेरा भतीजा राधे है।” जग्गू एवं शंकर ग्राम नरदिघाना के निवासी हैं। जग्गू की ससुराल उनके गाँव में स्थित है। दोनों अभियुक्त आपस में मित्र हैं।

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



9. कन्हैया (पी.डब्ल्यू.-2/सूचनाकर्ता) ने अपने मुख्य परीक्षण में कथन किया कि घटना के दिन जब वह अपने घर लौट रहा था, तब उसने देखा कि शंकर, जग्गू तथा राधे आपस में बातचीत कर रहे थे। वह राधे को जानता था क्योंकि वह उसके गाँव से चार-पाँच मील दूर स्थित ग्राम कोटा का निवासी था। उन्हें बातचीत करते हुए देखकर वह अपने गाँव की ओर चल पड़ा। कुछ समय पश्चात उसने उत्तर-पूर्व दिशा से गोली चलने की आवाज सुनी। गोली की आवाज सुनते ही वह तत्काल उस दिशा में दौड़ा और देखा कि शंकर एवं जग्गू राधे को सड़क के पूर्वी भाग की ओर घसीट रहे थे। इसके बाद वह प्रेमलाल तिवारी, लाउधर कोल तथा छोटकऊ के साथ घटनास्थल पर पहुँचा। उन्हें देखकर अभियुक्तगण वहाँ खड़ी दो साइकिलों पर बैठकर घटनास्थल से भाग गए। उन्होंने अभियुक्तों का पीछा नहीं किया क्योंकि उनके पास तमंचे थे। इसके उपरान्त वे मृतक के पास पहुँचे, जिसने कराहते हुए हिचकियाँ लीं और उसकी मृत्यु हो गई। इसके बाद वह प्रधान को बुलाने के लिए मजरा गाँव गया। लिखित तहरीर तैयार होने के पश्चात वह खिलाड़ी विश्वकर्मा, ललता कोहार, सुखदेव तथा पंजाबी कोल के साथ थाना लालगंज गया और उक्त तहरीर निरीक्षक को सौंप दी।

10. डॉ. चन्द्र प्रकाश (पी.डब्ल्यू.-3) ने अपने मुख्य परीक्षण में कथन किया कि दिनांक 09.08.1986 को वह जिला चिकित्सालय, मिर्जापुर में वरिष्ठ अस्थि रोग विशेषज्ञ के पद पर नियुक्त थे। उसी दिन लगभग अपराह्न 04:00 बजे उन्होंने मृतक के शव का पोस्टमार्टम किया। पोस्टमार्टम के दौरान निम्नलिखित मृत्युपूर्व चोट पाई गई :-

“बाएँ कंधे के जोड़ के ऊपरी एवं अग्र भाग पर 2.0 सेमी × 2.5 सेमी आकार का गोली लगने का घाव, जो शरीर की गुहा तक गहरा था। घाव की दिशा भीतर एवं नीचे की ओर थी। घाव के किनारे भीतर की ओर मुड़े हुए तथा झुलसे हुए थे। घाव के चारों ओर लगभग 1.0 सेमी क्षेत्र की त्वचा भी काली एवं झुलसी हुई थी। चीरा लगाने पर

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



अधःस्थित ऊतक एवं मांसपेशियाँ फटी हुई पाई गईं तथा पसली टूटी हुई थी। बाएँ फेफड़े का ऊपरी खण्ड गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त था तथा उसके भीतर एक वार्डिंग कैप एवं 27 धात्विक छर्रे पाए गए। वक्ष गुहा के बाएँ भाग में लगभग 400 मिलीलीटर जमा हुआ रक्त पाया गया।”

मृतक की आयु लगभग 25 वर्ष आँकी गई तथा उसकी मृत्यु लगभग दो दिन पूर्व होना पाई गई। शव की ऊपरी एवं निचली दोनों भुजाओं से शव-कठोरता समाप्त हो चुकी थी। पूरे शरीर पर फफोले उपस्थित थे। सिर के बाल आसानी से झड़ रहे थे। त्वचा के कुछ भागों में हरित वर्ण परिवर्तन पाया गया।

आन्तरिक परीक्षण में यह पाया गया कि बाईं ओर की प्रथम पसली टूटी हुई थी। बाईं ओर का पूरा फटा हुआ था। बायाँ फेफड़ा क्षतिग्रस्त था तथा उसके ऊपरी खण्ड में 27 धात्विक छर्रे एवं एक वार्डिंग कैप प्राप्त हुई। बाएँ फेफड़े में जमा हुआ रक्त पाया गया। आमाशय में पचा हुआ चावल एवं दाल उपस्थित थी। छोटी आँत में गैस एवं मल पदार्थ विद्यमान था।

चिकित्सक की राय में मृतक राधे की मृत्यु का कारण “मृत्युपूर्व चोट के परिणामस्वरूप उत्पन्न आघात एवं अत्यधिक रक्तस्राव” था।

11. रंगीलाल (पी.डब्ल्यू.-4) ने अपने मुख्य परीक्षण में कथन किया कि घटना वाले दिन मध्यरात्रि में मृतक के मामा ने उसे घटना की सूचना दी थी। उसे बताया गया कि कुछ अज्ञात बदमाशों ने राधे (मृतक) की हत्या कर दी है तथा उसका शव जंगल में फेंक दिया है। उसने यह भी कहा कि घटना से लगभग दो दिन पूर्व राधे अपनी बहन के घर जमोहरा जाने के लिए साइकिल से निकला था। वह पंचायतनामा कार्यवाही का भी साक्षी था तथा विवेचक द्वारा मृतक का शव उसके सुपुर्द किया गया था।

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



12. राम लखन (पी.डब्ल्यू.-5) ने अपने मुख्य परीक्षण में कथन किया कि जब वह चन्दूलाल के साथ धान के बीज की तलाश में जा रहा था, उसी समय थाना-लालगंज के पुलिस अधिकारी तथा एक कांस्टेबल, जो दो व्यक्तियों को पकड़े हुए थे, वहाँ पहुँचे। पुलिस अधिकारियों ने उन्हें रोककर साथ चलने के लिए कहा और बताया कि ये दोनों अभियुक्त कुछ सामान बरामद करा सकते हैं। अभियुक्तों में से एक उन्हें ग्राम नरदगहना के दक्षिण भाग में स्थित अपने घर ले गया। उस कमरे में बाहर से ताला लगा हुआ था। अभियुक्त ने दीवार के पूर्वी भाग के निकट अपने हाथों से मिट्टी खोदी और वहाँ से प्लास्टिक में लिपटा हुआ एक तमंचा तथा एक जीवित कारतूस निकालकर प्रस्तुत किया। इसके पश्चात दूसरे अभियुक्त जग्गू ने उन्हें अपने घर ले जाकर एक साइकिल बरामद कराई।

13. थाना प्रभारी रामप्रताप आर्य (पी.डब्ल्यू.-6) की साक्ष्य का उल्लेख पूर्ववर्ती अनुच्छेदों में किया जा चुका है।

14. अभियोजन साक्ष्य समाप्त होने के उपरान्त अभियुक्त-अपीलार्थीगण, अर्थात् जग्गू कोल एवं शंकर उर्फ शिवशंकर के कथन दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अंतर्गत अभिलिखित किए गए, जिनमें उन्होंने अपने विरुद्ध लगाए गए समस्त आरोपों से इंकार किया।

15. विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, मिर्जापुर ने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने तथा अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों का परीक्षण, मूल्यांकन एवं सूक्ष्म विश्लेषण करने के पश्चात अभियुक्त-अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध ठहराते हुए उपर्युक्तानुसार दण्डित किया।

16. फलस्वरूप, वर्तमान अपील प्रस्तुत की गई।

अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत तर्क

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



17. अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राजेश कुमार विश्वकर्मा ने तर्क प्रस्तुत किया कि अभियोजन पक्ष मृतक की हत्या किए जाने के उद्देश्य (Motive) को सिद्ध करने में पूर्णतः विफल रहा है।

18. आगे यह तर्क दिया गया कि कथित घटना दिनांक 07.08.1986 को अपराह्न 04:30 बजे घटित हुई थी, जबकि उक्त घटना की प्रथम सूचना रिपोर्ट दिनांक 08.08.1986 को प्रातः लगभग 04:00 बजे, अर्थात् लगभग 12 घंटे की विलम्ब अवधि के पश्चात दर्ज कराई गई, जिसके संबंध में कोई युक्तिसंगत स्पष्टीकरण प्रस्तुत नहीं किया गया है।

19. यह भी तर्क दिया गया कि प्रेमलाल तिवारी (पी.डब्ल्यू.-1) एवं कन्हैया (पी.डब्ल्यू.-2/सूचनाकर्ता) की साक्ष्य के अवलोकन से स्पष्ट है कि वे घटना के प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं हैं, क्योंकि उन्होंने यह नहीं देखा कि मृतक को गोली किसने मारी थी। अतः उनकी गवाही अभियोजन कथा का समर्थन नहीं करती, बल्कि उसे असत्य सिद्ध करती है।

20. जहाँ तक बरामद हथियार (तमंचा) एवं कारतूस का प्रश्न है, यह नहीं कहा जा सकता कि कथित गोली उसी तमंचे से चलाई गई थी, जो बरामद किया गया। विवेचक द्वारा जानबूझकर उस हथियार की बैलिस्टिक जाँच नहीं कराई गई, जिससे यह स्थापित किया जा सके कि बरामद हथियार का उपयोग अपराध कारित करने में किया गया था अथवा नहीं। अतः अभियोजन की कहानी पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अपने उक्त तर्क के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय **सुखवंत सिंह बनाम पंजाब राज्य** पर भरोसा व्यक्त किया।

21. अभिलेख पर ऐसा कोई प्रत्यक्ष अथवा परिस्थितिजन्य साक्ष्य उपलब्ध नहीं है, जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि दोनों अपीलार्थियों की मृतक राधे की हत्या करने की समान मंशा थी। अतः भारतीय दण्ड संहिता की धारा 34 का आरोप भी सिद्ध नहीं होता।

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



22. अंत में यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि अभियुक्त-अपीलार्थीगण को दिनांक 09.08.1986 को गिरफ्तार किया गया था तथा उन्हें दिनांक 07.11.1989 को जमानत प्रदान की गई। इस प्रकार वे तीन वर्ष से अधिक अवधि तक कारागार में निरुद्ध रहे, जबकि अभियोजन पक्ष उनके विरुद्ध अपराध सिद्ध करने में असफल रहा। वर्तमान समय में दोनों अपीलार्थी वृद्धावस्था को प्राप्त हो चुके हैं तथा अपने दैनिक कार्य भी स्वतंत्र रूप से करने में सक्षम नहीं हैं। अभियोजन पक्ष उनके अपराध को युक्तियुक्त संदेह से परे सिद्ध करने में विफल रहा है।

प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से प्रस्तुत तर्क

23. इसके विपरीत, राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता-प्रथम श्री एस.के. ओझा ने अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों का प्रबल विरोध किया तथा कहा कि अभियोजन पक्ष ने अपना मामला युक्तियुक्त संदेह से परे सिद्ध कर दिया है, जिसका समर्थन प्रेमलाल तिवारी (पी.डब्ल्यू.-1) एवं कन्हैया (पी.डब्ल्यू.-2/सूचनाकर्ता) की साक्ष्य से भी होता है।

24. आगे यह तर्क दिया गया कि प्रेमलाल (पी.डब्ल्यू.-1) एवं कन्हैया (पी.डब्ल्यू.-2) के कथनों में कोई विरोधाभास नहीं है। यह भी कहा गया कि चिकित्सक की राय भी अभियोजन की कहानी के अनुरूप है।

25. अंततः यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि चूँकि अभियोजन पक्ष ने अपना मामला युक्तियुक्त संदेह से परे सिद्ध कर दिया है तथा साक्ष्यों की संपूर्ण श्रृंखला को पूर्ण कर दिया है, इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध ठहराना पूर्णतः विधिसम्मत है। विवादित निर्णय एवं आदेश में कोई त्रुटि नहीं है। अतः वर्तमान आपराधिक अपील निराधार है और निरस्त किए जाने योग्य है।

विश्लेषण एवं निष्कर्ष

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



26. अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राजेश कुमार विश्वकर्मा तथा उत्तर प्रदेश राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता-प्रथम श्री एस.के. ओझा को सुना गया तथा अभिलेख पर उपलब्ध समस्त दस्तावेजों का अवलोकन किया गया।

27. वर्तमान मामले में घटना दिनांक 07.08.1986 को लगभग अपराह्न 04:30 बजे घटित हुई थी, किन्तु प्रथम सूचना रिपोर्ट दिनांक 08.08.1986 को प्रातः 04:00 बजे, अर्थात् घटना के लगभग 12 घंटे पश्चात दर्ज कराई गई। प्रेमलाल तिवारी (पी.डब्ल्यू.-1) एवं कन्हैया (पी.डब्ल्यू.-2) ने इस विलम्ब का स्पष्टीकरण देते हुए कहा है कि लिखित तहरीर अपराह्न 01:00 बजे तैयार की गई थी। इसके पश्चात कन्हैया (पी.डब्ल्यू.-2) रात्रि के समय थाना जाने के लिए रवाना हुआ, जैसा कि उसने अपने कथन में कहा है। थाना जाने का मार्ग जंगल एवं नदी से होकर गुजरता था। रात्रि का समय होने के कारण लगभग 10 मील की दूरी तय करने में उसे कम से कम तीन घंटे का समय लगना स्वाभाविक था। 28. पी.डब्ल्यू.-1 प्रेमलाल तिवारी ने अपने कथन में स्पष्ट रूप से कहा तथा स्वीकार किया कि उन्होंने यह नहीं देखा था कि गोली किसने चलाई थी। पी.डब्ल्यू.-2 कन्हैया लाल ने भी कहा कि जब वह तालाब के निकट पहुँचा, तब उसने गोली चलने की आवाज सुनी और तत्पश्चात घटनास्थल की ओर दौड़ा, जहाँ उसने अभियुक्तों को मृतक को झाड़ियों की ओर ले जाते हुए देखा। उसने भी घटना को प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा था और यह नहीं बताया कि मृतक को गोली किसने मारी थी। अभिलेख पर ऐसा कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य उपलब्ध नहीं है, जो अभियुक्तों को अपराध कारित किए जाने से जोड़ता हो।

29. यह विधि का सुव्यवस्थित सिद्धान्त है कि जहाँ अभियुक्त-अपीलार्थी को अपराध से जोड़ने वाला कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य उपलब्ध न हो तथा किसी भी साक्षी ने अभियुक्त-अपीलार्थी को मृतक की हत्या करते हुए न देखा हो, वहाँ अभियोजन पक्ष का सम्पूर्ण मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित माना जाता है। ऐसी स्थिति में विधि यह

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



अपेक्षा करती है कि अभियोजन द्वारा जिन प्रत्येक आपत्तिजनक परिस्थितियों पर भरोसा किया गया है, वे पूर्णतः स्थापित हों तथा परिस्थितियों की श्रृंखला इतनी सम्पूर्ण एवं अभेद्य हो कि वह निर्विवाद रूप से अभियुक्त के अपराध की ओर ही संकेत करे तथा उसकी निर्दोषता के अनुकूल प्रत्येक सम्भावित परिकल्पना को निष्कासित कर दे। मात्र संदेह, चाहे वह कितना ही प्रबल क्यों न हो, प्रमाण का स्थान ग्रहण नहीं कर सकता। यदि सिद्ध की गई परिस्थितियाँ ऐसी सतत एवं सुसंगत श्रृंखला का निर्माण नहीं करतीं, जिससे केवल यही निष्कर्ष निकले कि अभियुक्त-अपीलार्थी ही अपराध का एकमात्र कर्ता है, तो संदेह का लाभ अनिवार्य रूप से अभियुक्त-अपीलार्थी को प्रदान किया जाना चाहिए।

30. शरद बिर्धीचन्द सरडा बनाम महाराष्ट्र राज्य² में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने परिस्थितिजन्य साक्ष्य के संबंध में पाँच स्वर्णिम सिद्धान्त प्रतिपादित किए हैं, जो निम्नवत् हैं :-

- (i) जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, वे पूर्णतः स्थापित होनी चाहिए।
- (ii) स्थापित तथ्य केवल अभियुक्त के अपराधी होने की परिकल्पना के अनुरूप होने चाहिए, अर्थात् उनकी व्याख्या किसी अन्य परिकल्पना के आधार पर नहीं की जा सकती, सिवाय इसके कि अभियुक्त दोषी है।
- (iii) परिस्थितियाँ निर्णायक प्रकृति एवं प्रवृत्ति की होनी चाहिए।
- (iv) वे प्रत्येक सम्भावित परिकल्पना को निष्कासित करती हों, सिवाय उस परिकल्पना के जिसे सिद्ध किया जाना है।
- (v) साक्ष्यों की श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषता के अनुरूप किसी भी युक्तियुक्त निष्कर्ष के लिए कोई आधार शेष न रहे तथा यह प्रदर्शित हो कि सामान्य मानवीय संभावनाओं के आधार पर उक्त कृत्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा।

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



31. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अशोक कुमार श्रीवास्तव³ में यह प्रतिपादित किया गया कि परिस्थितिजन्य साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय अत्यधिक सावधानी बरती जानी चाहिए तथा यदि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से दो सम्भावित निष्कर्ष निकलते हों, तो उनमें से वह निष्कर्ष स्वीकार किया जाना चाहिए जो अभियुक्त के पक्ष में हो। यह भी प्रतिपादित किया गया कि जिन परिस्थितियों पर भरोसा किया गया है, उनका पूर्णतः स्थापित होना आवश्यक है तथा उन सभी स्थापित तथ्यों का समग्र प्रभाव केवल अभियुक्त के दोषी होने की परिकल्पना के अनुरूप होना चाहिए।

32. हनुमन्त गोविन्द नरगुण्डकर बनाम मध्य प्रदेश राज्य⁴ के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की है :-

“यह स्मरण रखा जाना चाहिए कि जिन मामलों में साक्ष्य परिस्थितिजन्य प्रकृति का हो, वहाँ जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, वे प्रथम दृष्टया पूर्णतः स्थापित होनी चाहिए तथा इस प्रकार स्थापित सभी तथ्य केवल अभियुक्त के दोषी होने की परिकल्पना के अनुरूप होने चाहिए। पुनः, परिस्थितियाँ निर्णायक प्रकृति एवं प्रवृत्ति की होनी चाहिए तथा वे ऐसी होनी चाहिए कि सिद्ध किए जाने वाली परिकल्पना के अतिरिक्त प्रत्येक अन्य सम्भावित परिकल्पना को निष्कासित कर दें। दूसरे शब्दों में, साक्ष्यों की श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषता के अनुरूप किसी भी युक्तियुक्त निष्कर्ष के लिए कोई आधार शेष न रहे तथा वह ऐसी होनी चाहिए जिससे यह प्रदर्शित हो कि सामान्य मानवीय संभावनाओं के आधार पर उक्त कृत्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा।”

33. पदाला वीरा रेड्डी बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य⁵ के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नवत् अभिमत व्यक्त किया :-

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



“10. विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार करने से पूर्व हम प्रारम्भ में ही यह इंगित करना उचित समझते हैं कि वर्तमान मामले में अभियुक्त को विचाराधीन अपराध से जोड़ने वाला कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य उपलब्ध नहीं है तथा अभियोजन का सम्पूर्ण मामला केवल परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित है। इस न्यायालय ने अनेक निर्णयों में निरन्तर यह प्रतिपादित किया है कि जब कोई मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित हो, तब ऐसे साक्ष्य को निम्नलिखित कसौटियों पर खरा उतरना आवश्यक है :-

(1) जिन परिस्थितियों के आधार पर अपराध का निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया जा रहा है, वे दृढ़ एवं ठोस रूप से स्थापित होनी चाहिए;

(2) वे परिस्थितियाँ निश्चित प्रकृति की हों तथा निर्विवाद रूप से अभियुक्त के दोष की ओर संकेत करती हों;

(3) समस्त परिस्थितियाँ सामूहिक रूप से ऐसी पूर्ण श्रृंखला का निर्माण करें जिससे इस निष्कर्ष के अतिरिक्त कोई अन्य निष्कर्ष सम्भव न हो कि सामान्य मानवीय संभावनाओं के अनुसार अपराध अभियुक्त द्वारा ही कारित किया गया है और किसी अन्य द्वारा नहीं;

(4) दोषसिद्धि बनाए रखने के लिए परिस्थितिजन्य साक्ष्य पूर्ण होना चाहिए तथा उसकी व्याख्या अभियुक्त के दोषी होने की परिकल्पना के अतिरिक्त किसी अन्य परिकल्पना से संभव नहीं होनी चाहिए। ऐसा साक्ष्य न केवल अभियुक्त के दोषी होने के अनुरूप होना चाहिए, बल्कि उसकी निर्दोषता के साथ पूर्णतः असंगत भी होना चाहिए।”

34. सी. चेन्ना रेड्डी एवं अन्य बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य⁶ के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित दोषसिद्धि के एक मामले पर विचार करते हुए निम्नलिखित प्रतिपादित किया :-

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



“21. परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित मामले में यह विधि का स्थापित सिद्धान्त है कि जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाता है, वे पूर्णतः सिद्ध होनी चाहिए तथा ऐसी परिस्थितियाँ निर्णायक प्रकृति की होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त, समस्त परिस्थितियाँ पूर्ण होनी चाहिए तथा साक्ष्यों की श्रृंखला में कोई रिक्तता शेष नहीं रहनी चाहिए। आगे, सिद्ध की गई परिस्थितियाँ केवल अभियुक्त के दोषी होने की परिकल्पना के अनुरूप होनी चाहिए तथा उसकी निर्दोषता के साथ पूर्णतः असंगत होनी चाहिए। वर्तमान मामले में अधीनस्थ न्यायालयों ने इन स्थापित सिद्धान्तों की उपेक्षा की है तथा प्रमाण के स्थान पर संदेह को आधार बना लिया है, साथ ही कुछ ऐसे साक्ष्यों पर भी भरोसा किया है जो ग्राह्य नहीं थे।”

35. रामरेड्डी राजेश खन्ना रेड्डी बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य⁷ के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पुनः परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित दोषसिद्धि के प्रश्न पर विचार करते हुए निम्नवत् प्रतिपादित किया :-

“26. यह अब विधि का सुव्यवस्थित सिद्धान्त है कि परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि स्थापित करने के लिए अभियोजन पक्ष को प्रत्येक आपत्तिजनक परिस्थिति को विश्वसनीय एवं निर्णायक साक्ष्य द्वारा सिद्ध करना होगा तथा सिद्ध की गई परिस्थितियाँ ऐसी घटनाओं की श्रृंखला का निर्माण करें, जिससे अभियुक्त के दोषी होने के अतिरिक्त कोई अन्य निष्कर्ष सम्भव न हो। परिस्थितियाँ किसी अन्य परिकल्पना के अनुकूल नहीं होनी चाहिए। यह भी समान रूप से स्थापित है कि मात्र संदेह, चाहे वह कितना ही गंभीर क्यों न हो, प्रमाण का विकल्प नहीं हो सकता तथा न्यायालयों को केवल परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर किसी अभियुक्त को दोषी ठहराते समय अत्यन्त सावधानी बरतनी चाहिए।”

36. सत्ततिया बनाम महाराष्ट्र राज्य⁸ के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित प्रतिपादित किया :-

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



“10. हमने सम्पूर्ण मामले पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया है। यह विधि का स्थापित सिद्धान्त है कि किसी अपराध को केवल प्रत्यक्ष साक्ष्य से ही नहीं, बल्कि परिस्थितिजन्य साक्ष्य द्वारा भी सिद्ध किया जा सकता है, जहाँ प्रत्यक्ष साक्ष्य उपलब्ध न हो। न्यायालय तब अपराध का निष्कर्ष निकाल सकता है जब समस्त आपत्तिजनक तथ्य एवं परिस्थितियाँ अभियुक्त की निर्दोषता के साथ पूर्णतः असंगत पाई जाएँ। निस्संदेह, जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, उन्हें युक्तियुक्त संदेह से परे सिद्ध किया जाना चाहिए तथा यह प्रदर्शित किया जाना चाहिए कि उनका उस मुख्य तथ्य से घनिष्ठ सम्बन्ध है, जिसे उन परिस्थितियों के आधार पर सिद्ध किया जाना है।”
उक्त निर्णय में इस न्यायालय ने आगे यह भी कहा :-

“17. इस स्तर पर यह उल्लेख करना भी उपयुक्त होगा कि संविधान के अनुच्छेद 136 के अंतर्गत अधिकारिता का प्रयोग करते समय यह न्यायालय सामान्यतः ऐसी दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करने से परहेज करेगा, जिसकी पुष्टि अपीलीय न्यायालय द्वारा भी कर दी गई हो। किन्तु यदि यह पाया जाता है कि पूर्णतः परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित किसी मामले में साक्ष्यों का मूल्यांकन गंभीर त्रुटियों से ग्रस्त है तथा उसके परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई है, तो यह न्यायालय विचारण न्यायालय एवं उच्च न्यायालय द्वारा अभिलिखित समवर्ती निष्कर्षों में भी हस्तक्षेप करेगा। — भारत बनाम मध्य प्रदेश राज्य, (2003) 3 एस.सी.सी. 106।”

37. गोवा राज्य बनाम पांडुरंग मोहिते⁹ के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पुनः इस स्थापित विधिक सिद्धान्त को दोहराया कि जहाँ दोषसिद्धि पूर्णतः परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित हो, वहाँ अपराध का निष्कर्ष तभी न्यायोचित ठहराया जा सकता है जब समस्त आपत्तिजनक तथ्य एवं परिस्थितियाँ अभियुक्त की निर्दोषता अथवा किसी अन्य व्यक्ति के अपराधी होने की सम्भावना के साथ असंगत पाई जाएँ। जिन परिस्थितियों के आधार पर अभियुक्त के दोषी होने का निष्कर्ष निकाला जाता है, उन्हें युक्तियुक्त संदेह से परे सिद्ध किया जाना आवश्यक है

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



तथा यह प्रदर्शित किया जाना चाहिए कि उनका उस मुख्य तथ्य से निकट एवं प्रत्यक्ष सम्बन्ध है, जिसे उन परिस्थितियों के आधार पर सिद्ध किया जाना है।

38. शरद बिर्धीचन्द सरडा (उपर्युक्त) के निर्णय का अनुसरण हाल ही में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनेक निर्णयों में किया गया है, जिनमें लक्ष्मण प्रसाद उर्फ लक्ष्मण बनाम मध्य प्रदेश राज्य तथा आर. श्रीनिवास बनाम कर्नाटक राज्य¹¹ प्रमुख हैं।

39. बरामद हथियार एवं नमूना पैकेटों के संबंध में सुरक्षित अभिरक्षा की अखण्ड श्रृंखला का प्रमाण अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया जाना आवश्यक है। ऐसा करने में विफल रहने पर अभियुक्त को दोषमुक्त किए जाने का परिणाम उत्पन्न होता है।

40. सुखवंत सिंह बनाम पंजाब राज्य¹² के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की है :-

“इस मामले में एक और गंभीर त्रुटि विद्यमान है। हम पाते हैं कि यद्यपि घटनास्थल से पी.डब्ल्यू.-6, सहायक उपनिरीक्षक रघुबीर सिंह द्वारा एक खाली खोखा बरामद किया गया था तथा अभियुक्त की गिरफ्तारी के समय उसके कब्जे से एक पिस्तौल एवं कुछ कारतूस भी बरामद किए गए थे, तथापि अभियोजन ने, जिन कारणों का ज्ञान केवल उसे ही है, बरामद खोखे एवं जब्त पिस्तौल को परीक्षण एवं विशेषज्ञ राय प्राप्त करने हेतु बैलिस्टिक विशेषज्ञ के पास नहीं भेजा। ऐसी तुलना अपराध एवं अभियुक्त के मध्य एक महत्वपूर्ण कड़ी-साक्ष्य प्रदान कर सकती थी। यह अभियोजन पक्ष की एक ऐसी चूक है, जिसके संबंध में न तो विचारण न्यायालय के समक्ष और न ही हमारे समक्ष कोई स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया गया है। यह विशेष रूप से रेखांकित किए जाने की आवश्यकता नहीं है कि जिन मामलों में आग्रेयास्त्रों से चोटें पहुँचाई गई हों तथा विवेचना के दौरान आग्रेयास्त्र एवं अपराध में प्रयुक्त कारतूस दोनों

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



बरामद किए गए हों, वहाँ अभियुक्त को अपराध से जोड़ने के लिए बैलिस्टिक विशेषज्ञ की राय अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। ऐसे मामलों में विचारण न्यायालय के समक्ष विशेषज्ञ की राय प्रस्तुत न किए जाने से अभियोजन पक्ष के मामले की विश्वसनीयता पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।”

41. **पंकज बनाम राजस्थान राज्य**¹³ के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह प्रतिपादित किया है कि “जब घटना की उत्पत्ति तथा घटना के घटित होने की वास्तविक विधि ही संदेहास्पद हो, तब अभियुक्त को दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता।” इस निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **भगवान सहाय बनाम राजस्थान राज्य**¹⁴ के निर्णय का भी उल्लेख किया, जिसमें यह कहा गया है कि एक बार यह पाया जाए कि अभियोजन पक्ष ने घटना की वास्तविक उत्पत्ति अथवा प्रारम्भिक परिस्थितियों को छिपाया है, तो ऐसी स्थिति में संदेह का लाभ प्रदान करना ही एकमात्र उपयुक्त मार्ग होता है।

42. **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम किशोर गोपाल दास**¹⁵ के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने “युक्तियुक्त संदेह” की अवधारणा को संक्षेप एवं स्पष्ट रूप से निम्न प्रकार व्याख्यायित किया है :-

“.....संभावनाओं की विभिन्न श्रेणियों तथा प्रमाण की मात्रा के मूल्यांकन में एक स्पष्ट व्यक्तिपरक तत्व निहित रहता है। न्यायिक संभाव्यता का निर्धारण अंततः सुदृढ़ सामान्य बुद्धि तथा अन्तिम विश्लेषण में न्यायाधीश की प्रशिक्षित न्यायिक अंतर्दृष्टि पर आधारित होना चाहिए। यद्यपि आपराधिक न्याय प्रक्रिया द्वारा अभियुक्त व्यक्तियों को प्रदत्त संरक्षण को क्षीण नहीं किया जाना चाहिए, तथापि तुच्छ बातों को बिना समुचित आधार के वैधता प्रदान करना आपराधिक न्याय प्रशासन का उपहास बना देगा।”

43. **रामाकान्त राय बनाम मदन राय एवं अन्य**¹⁶ के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित प्रतिपादित किया :-

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



“24. किसी संदेह को तभी युक्तियुक्त संदेह कहा जाएगा जब वह अमूर्त कल्पनाओं अथवा काल्पनिक अटकलों पर आधारित न हो। विधि का एकमात्र उद्देश्य सत्य की खोज है। युक्तियुक्त संदेह के गठन के लिए यह आवश्यक है कि वह अत्यधिक भावनात्मक प्रतिक्रिया से मुक्त हो। संदेह वास्तविक एवं सारभूत होना चाहिए तथा अभियुक्त के दोष के संबंध में अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य अथवा साक्ष्य के अभाव से उत्पन्न होना चाहिए, न कि मात्र अस्पष्ट आशंकाओं पर आधारित हो। युक्तियुक्त संदेह कोई काल्पनिक, तुच्छ अथवा केवल सम्भावित संदेह नहीं है, बल्कि ऐसा निष्पक्ष संदेह है जो तर्क एवं सामान्य बुद्धि पर आधारित हो। ऐसा संदेह मामले में उपलब्ध साक्ष्यों से उत्पन्न होना चाहिए।”

44. उपर्युक्त निर्णय का अनुसरण हाल ही में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **गोवर्धन एवं अन्य बनाम छत्तीसगढ़ राज्य**¹⁷ के वाद में भी किया गया है, जिसमें न्यायालय ने निम्नवत् प्रतिपादित किया :-

“20. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3 के अनुसार किसी तथ्य को तब सिद्ध कहा जा सकता है, जब न्यायालय अपने समक्ष उपलब्ध समस्त सामग्री पर विचार करने के उपरान्त या तो उसके अस्तित्व पर विश्वास कर ले अथवा उसके अस्तित्व को इतना संभावित माने कि उस विशेष मामले की परिस्थितियों में एक विवेकशील व्यक्ति उसके अस्तित्व की धारणा के आधार पर कार्य करना उचित समझे। न्यायालय इस प्रक्रिया में यह परीक्षण करता है कि आरोपित तथ्यों, जिनमें अभियुक्त को आरोपित विशिष्ट आपराधिक कृत्य भी सम्मिलित हैं, को सिद्ध किया गया है अथवा नहीं।”

21. यह भी ध्यान देने योग्य है कि विधि साक्ष्यों के विभिन्न अंशों को पूर्णतः अभेद्य एवं त्रुटिरहित ढंग से जोड़ने की अपेक्षा नहीं करती, क्योंकि आपराधिक मामलों में प्रमाण का मानदण्ड “सभी प्रकार के संदेहों से परे” नहीं, बल्कि “युक्तियुक्त संदेह से परे” होता है। दूसरे शब्दों में, यदि समस्त साक्ष्यों को समेकित रूप से देखने पर एक

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



स्पष्ट चित्र उभरता है, जो युक्तियुक्त संदेह से परे यह इंगित करता है कि अपराध के कारित किए जाने में अभियुक्त की क्या भूमिका रही है, तो न्यायालय अभियुक्त को आपराधिक रूप से उत्तरदायी ठहराते हुए दण्ड विधान के प्रावधानों के अंतर्गत दण्डित करता है। यह स्थिति दीवानी मामलों में लागू “संभावनाओं के प्राबल्य” के सिद्धान्त से भिन्न है।

22. इस स्तर पर यह विचार करना प्रासंगिक होगा कि “युक्तियुक्त संदेह” से क्या अभिप्राय है। इसका अर्थ है कि ऐसा संदेह मात्र कल्पनाओं अथवा अनुमानजन्य अटकलों पर आधारित न हो। वह सूक्ष्म भावनात्मक प्रतिक्रियाओं का परिणाम नहीं होना चाहिए तथा संदेह वास्तविक एवं सारभूत होना चाहिए, न कि केवल अस्पष्ट आशंका। युक्तियुक्त संदेह कोई काल्पनिक, तुच्छ अथवा मात्र सम्भावित संदेह नहीं होता, बल्कि ऐसा निष्पक्ष संदेह होता है जो तर्क एवं सामान्य बुद्धि पर आधारित हो।’

45. जितेन्द्र कुमार मिश्रा उर्फ जित्तू बनाम मध्य प्रदेश राज्य¹⁸ के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नवत् प्रतिपादित किया है :-

“हम इस तथ्य से भली-भाँति अवगत हैं कि अपीलीय न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा अभिलिखित दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करने में संयम बरतना चाहिए, किन्तु जहाँ अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य यह इंगित करते हों कि अभियोजन पक्ष अभियुक्त का अपराध युक्तियुक्त संदेह से परे सिद्ध करने में विफल रहा है तथा अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा व्यक्त दृष्टिकोण से भिन्न एक युक्तिसंगत दृष्टिकोण अपनाया जा सकता हो, वहाँ अपीलीय न्यायालय को अभियुक्तों को संदेह का लाभ प्रदान करने से संकोच नहीं करना चाहिए।”

46. बरामद पिस्तौल (प्रदर्श-क-7) को घटनास्थल से बरामद खोखों के साथ तुलना हेतु बैलिस्टिक विशेषज्ञ के पास नहीं भेजा गया। अतः यह स्थापित नहीं किया जा सका कि घातक गोली उसी पिस्तौल से चलाई गई थी, जो बरामद की गई थी। घटना के एक दिन पश्चात अभियुक्त शंकर उर्फ शिवशंकर की निशानदेही पर उक्त

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



पिस्तौल की बरामदगी भी संदेहास्पद प्रतीत होती है। घटना के घटित होने की विधि, अभियुक्तों की संलिप्तता तथा कथित बरामदगी के संबंध में अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य ऐसे नहीं हैं जिन पर सुरक्षित रूप से विश्वास किया जा सके। किसी भी साक्षी ने यह नहीं देखा कि किसी अभियुक्त ने मृतक पर गोली चलाई हो। पी.डब्ल्यू.-2 कनहैया ने केवल इतना देखा था कि अभियुक्तगण मृतक के साथ बातचीत कर रहे थे। कुछ मिनट पश्चात अन्य साक्षियों ने गोली चलने की आवाज सुनी और तत्काल घटनास्थल की ओर दौड़े। अतः घटना का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी उपलब्ध नहीं है तथा अभियोजन पक्ष का सम्पूर्ण मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित है।

47. जब हम प्रेमलाल तिवारी (पी.डब्ल्यू.-1) तथा कनहैया (पी.डब्ल्यू.-2/सूचनाकर्ता) की साक्ष्य का सावधानीपूर्वक एवं सम्यक् परीक्षण करते हैं, जैसा कि इस मामले के तथ्यों में अपेक्षित है, तब हम पाते हैं कि उनकी गवाही हमारी दृष्टि में विश्वास उत्पन्न नहीं करती, जिससे दोषसिद्धि को बनाए रखा जा सके। अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य न तो अपेक्षित गुणवत्ता के हैं और न ही उनमें पर्याप्त विश्वसनीयता है। ऐसे साक्ष्यों के आधार पर दोषसिद्धि बनाए रखना सुरक्षित नहीं होगा। मामले पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने के उपरान्त हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य अपीलार्थीगण के अपराध को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। अतः हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि अभियोजन पक्ष अपीलार्थीगण के विरुद्ध अपना मामला “युक्तियुक्त संदेह से परे” सिद्ध करने में विफल रहा है।

48. इस न्यायालय ने वर्तमान आपराधिक अपील का निर्णय उसके गुण-दोष के आधार पर किया है तथा उपर्युक्त निष्कर्ष अभिलिखित किए हैं। इसके अतिरिक्त यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि वर्तमान मामले की घटना लगभग चार दशक से भी अधिक पुरानी है। अपीलार्थीगण तीन वर्ष से अधिक अवधि तक कारागार में निरुद्ध रह चुके हैं।

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



49. परिणामतः, अपर सत्र न्यायाधीश, मिर्जापुर द्वारा पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 31.03.1987 एतद्वारा अपास्त किया जाता है। अपीलार्थीगण को उनके विरुद्ध लगाए गए समस्त आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है।

50. फलस्वरूप, उपर्युक्त समस्त कारणों के आधार पर वर्तमान आपराधिक अपील **स्वीकृत** की जाती है।

51. अपीलार्थीगण जगू कोल एवं शंकर उर्फ शिवशंकर वर्तमान में जमानत पर हैं। उनके जमानत बन्धपत्र निरस्त एवं उन्मोचित माने जाएंगे।

52. विचारण न्यायालय का अभिलेख तत्काल वापस प्रेषित किया जाए।

(माननीय न्यायमूर्ति देवेन्द्र सिंह-II) (माननीय न्यायमूर्ति चन्द्र धारी सिंह)

दिनांक : 02 फरवरी, 2026

सौरभ

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”